स्त्री प्रश्न और डॉ.अम्बेडकर का चिंतन

प्रवीण कुमार
054,ताप्ती छात्रावास
जे.एन.यू., नई दिल्ली–67।
मो. 09868721972
E-Mail - Pravinkmr05@gmail.com

आज स्त्रियों की दुर्दशा का सबसे बड़ा कारण पितृसत्तात्मक व्यवस्था व मानसिकता तथा स्त्रियों को संपत्ति से बेदखली है। यह स्थिति तब शुरू होती है जब सत्ता–संपत्ति का संघर्ष शुरू होता है। इसका अपना एक इतिहास है । यह इतिहास सामाजिक संरचना की निर्मिति के साथ ही बनने लगता है। जिसमें शोषक वर्ग अपने शौर्य का इतिहास तो लिखता है लेकिन मेहनतकश जनता को उससे बाहर रखता है। क्योंकि इतिहास जो देश, समाज के विकास और तरक्की का ,सभ्यता और संस्कृति का धरोहर होता है जिसमें अतीत की घटनाओं के साथ–साथ वर्तमान से रू–ब–रू होने तक और भविष्य निर्माण की संभावना तक, सभी प्रकार के टूल्स होते हैं, के ख्याल से कभी लिखा ही नहीं गया। लिखा गया तो सिर्फ और सिर्फ राजाओं के युद्ध की घटनाओं का वर्णन करने के लिए। यहीं पर आकर इतिहास लेखन ब्राह्मणवादी मानसिकता का शिकार हो जाता है। इस प्रक्रिया में भारत का 'अ–इतिहास' तो मिलता है लेकिन 'द–इतिहास' नहीं। यही कारण है कि दलितों और स्त्रियों का इतिहास भारतीय समाज में नहीं मिलता। कारण की तफसील की गुंजाइश नहीं है। लेकिन इतना कहा जा सकता है कि इतिहास का रूख बदला है । समग्रता की खोज ने सभ्यता के इतिहास में मानव की सभी स्थितियों की खोज करने को प्रयास किया है। यही खोज, आज यह साबित कर रही है कि मानव सभ्यता के इतिहास में दलितों और स्त्रियों के इतिहास का न होना, उसे जबरन शिक्षा और संपत्ति के अधिकार के साथ–साथ मानवाधिकार से वंचित करना था। यह वंचना आदिम समाज से निकल समाज का एक व्यवस्थित रूप लेने की प्रक्रिया में ही शुरू होती है। जहां ब्राह्मणवादी मानसिकता की वजह से मानव मानव में विभाजन शुरू होता है । सामंतवादी ,जातिवादी समाज की संरचना का निर्माण होता है। इसी संरचना ने भारतीय समाज में दलितों और स्त्रियों को उनके मानवाधिकारों से वंचित रखा है। और यहीं से उत्पीड़न और दासता की कहानी का इतिहास शुरू हो जाता है। यह इतिहास जितना ही पुराना है शोषण और गुलामी का इतिहास भी उतना ही पुराना है। इसलिए यह कहना एकदम सही है कि ''स्त्रियों के उत्पीड़न और दासता का इतिहास उतना ही पुराना है जितना असमानता और उत्पीड़न पर आधारित सामाजिक संरचनाओं के उद्‌भव और विकास का इतिहास ।''[1]

इतिहास गवाह है कि निजी संपत्ति का अधिकार ने मानवीय मूल्यों का हनन सबसे ज्यादा किया है।''निजी संपत्ति पर आधारित सामाजिक संबंधों संस्थाओं मूल्यों के अस्तित्व में आने के साथ ही स्त्री समुदाय की दासता की शुरूआत हुई। पूंजीवादी समाज में मेहनतकश स्त्रियां निकृष्टतम कोटि की उजरती गुलाम होने के साथ ही यौन आधार पर शोषण–उत्पीड़न का शिकार होती हैं और संपत्तिशाली वर्गों की स्त्रियां भी सामाजिक श्रम से कटी हुई या तो घरेलू दासता और पुरूष के बोझ से दबी हैं या फिर बुर्जुआ समाज में स्त्रियों के लिए आरक्षित कुछ खास अपमानजनक पेशों में लगी हुई पुरूष स्वेच्छाचारिता की शिकार हैं। वैज्ञानिक समाजवाद के प्रवर्तकों ने परिवार संस्था के नारी विरोधी चरित्र के तमाम आदर्शीकरण को छिन्न भिन्न करते हुए पूंजीवादी समाज में विवाह को नैतिक वैधिक मान्यता प्राप्त संस्थाबद्ध वेश्यावृत्ति करार दिया और घरेलू गुलामी को स्त्री प्रश्न का बुनियादी संघटक तंतु बताया।''[2]इस व्यवस्था की परंपरा लगभग वैदिक काल में शुरू हो जाती है। वैदिक परंपरा के ब्राह्मणवादी विचार ने सामाजिक नियमन का बहाना बनाकर स्त्रियों पर अनेक विषमता पूर्ण अमानवीय नियम थोप दिए। जैसे–

''1. जन्म से लेकर वैवाहिक संबंध होने तक स्त्री अपने पिता व भाइयों के नियंत्रण–संरक्षण में और विवाह होने के पश्चात पति के नियंत्रण में तथा विधवा होने पर पुत्रों के नियंत्रण में।
2. पति की मृत्यु पर पति के शव के साथ ही चिता में जलकर भस्म हो जाना ।
3. स्त्री का विवाह एक बार ही होता है।
4. पति से अलग होकर भी उसी की पत्नी बनी रहती है।
5. स्त्रियों में आठ अवगुण सदा ही रहते हैं।
6. स्त्री का पति अपनी पत्नी को बेच सकता है।

7. स्त्री का पति अपनी पत्नी को जुए में दॉव पर लगा सकता है।
8. पुरूषों के भाग्य की भांति स्त्री चरित्र को देवतागण भी नहीं जानते (त्रिया चरित्रम् भाग्यं,देवोन जानति कुतो मनुष्यः)
9. स्त्रियों को उसका पति कभी भी त्याग सकता है।
10. स्त्रियों को काम–काज में भागीदार नहीं बनाना।
11. स्त्रियों को प्रशासन से सर्वथा दूर रखना।
12. स्त्रियों का कोई वर्ण नहीं होता।
13. स्त्रियां पाप योनि से उत्पन्न है।
14. स्त्रियां अपने पिता को मुखाग्नि नहीं दे सकती ।
15. स्त्रियों का गोत्र विवाह के पश्चात बदल जाता है।
16.स्त्रियों को संपत्ति रखने का अधिकार नहीं है।''[3]

इसी व्यवस्था के कारण स्त्रियां न केवल मानसिक रूप से बल्कि शारीरिक रूप से भी गुलाम हो गयी। देश, समाज, परिवार के विकास लिए परिवार, समाज और देश में स्त्री–पुरूष का सहसंबंध एवं समसंबंध–सहभागिता का होना अनिवार्य है। इसके लिए स्त्री का किसी भी ब्राह्मणवादी व्यवस्था से मुक्त होना जरूरी है। उसी की मुक्ति में समाज की मुक्ति है। इसी की पहचान करते हुए डॉ.अम्बेडकर ने स्त्रियों को गुलामी से मुक्ति दिलाने के लिए तथा संपूर्ण संप्रभुत्व संपन्न समतामूलक भारत के निर्माण के लिए न केवल 1942 में नागपुर में 30,000 महिलाओं के साथ, उसी के नेतृत्व में 'दलित महिला फेडरेशन' बनाया बल्कि 'हिन्दू कोड बिल' तैयार किया था।

भारतीय संविधान निर्माता बाबा साहेब डॉ. अम्बेडकर मानववादी विचारक थे। उन्होंने मानव जीवन और सृष्टि का आधार स्त्री, स्त्री की गुलामी, उनकी मर्मांतक पीड़ा को समझते हुए उनकी स्वाधीनता (मानसिक, सामाजिक, राजनैतिक आदि स्वतंत्रता) के प्रति गहन अध्ययन किया। संसार में प्रचलित स्त्री स्वतंत्रता एवं स्त्रियों की संवेदना का सामाजिक मूल्यांकन कर मानवीयता के आधार पर समाज की इस आधारभूत शक्ति को प्रबलतम समर्थन प्रदान करने के लिए ही भारत की स्वतंत्र सार्वभौम संसद में 'हिन्दू कोड बिल' प्रस्तुत किया था। 'हिन्दू कोड बिल' स्त्रियों के प्रति ब्राह्मणवादी संकुचित पारंपरिक मानसिकता के कारण संसद में पारित नहीं हो सका। डॉ अम्बेडकर को उम्मीद थी कि पंडित जवाहर लाल नेहरू जैसे विकासवादी प्रगतिशील व्यक्ति के प्रधानमंत्रित्व में 'हिन्दू कोड बिल' पारित हो जायेगा। दुःख की बात है कि तत्कालीन राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्र प्रसाद, लोकसभा अध्यक्ष, उस बार अनेक हिन्दू सांसद तथा संसद के बाहर शंकराचार्य, हिन्दू महासभा, राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ, सनातनी धर्म के तत्कालीन पुरोधा माननीय करपात्री जी आदि ने मात्र विरोध ही नहीं किया वरन् डॉ.अम्बेकर को हिन्दू धर्म का शत्रु भी कहा। जबकि 'हिन्दू कोड बिल' हिन्दू सभ्यता एवं संस्कृति को ही समेकित तथा संवैधानिक रूप में प्रस्तुत करता है। कोड बिल की केवल चार धाराएं ही पारित हो सकीं थीं कि डॉ. राजेन्द्र प्रसाद ने राष्ट्रपति पद से त्यागपत्र देने की धमकी भी दे डाली।

विचारणीय बात यह है कि आखिर क्या कारण था और क्या चीज थी कि 'हिन्दू कोड बिल' में, देश के प्रथम राष्ट्रपति माननीय डॉ. राजेन्द्र प्रसाद जी को पद से त्यागपत्र देने की आवश्यकता पड़ गयी। बात की तफसील की जाए तो यह स्पष्ट होता है कि 'हिन्दू कोड बिल' पारित हो जाने पर पितृसत्तात्मक व्यवस्था की जड़ मिट जाती। उसी का परिणाम है कि वैज्ञानिक युग में जी रहे मानव मात्र स्त्री का शोषण रूका नहीं। वह अनवरत ढंग से जारी है ।

'हिन्दू कोड बिल' महिला सशक्तिकरण का ब्लू प्रिंट था। जिन व्यवस्था तंत्र और मानसिकता के कारण महिलाओं को कमजोर किया जाता रहा है। उसे अधिकारविहिन और पंगु बनाया गया। संपत्ति के अधिकार से वंचित किया गया। उन्हें शिक्षा से दूर रख कर चारदिवारी के भीतर घुट–घुट कर जिंदगी गुजारने पर मजबूर किया गया। उन सभी मानसिकताओं, धार्मिक कुरीतियों और उसके तंत्र के साथ–साथ उस व्यवस्था को बनाय रखने वाली मानसिकता और उस मानसिकता की संस्कृतिकरण उससे उपजा 'माइंड सेट' आदि सभी का विरोध 'हिन्दू कोड बिल' में था।

'हिन्दू कोड बिल' एक सामाजिक विधि विधान है। यह विधान स्त्रियों की अस्मिता, उसके अस्तित्व और उनके अधिकारों को संरक्षण प्रदान करता है। यह कोड बिल जिन आधिकारों की महत्ता को रेखांकित करता है उसे विस्तार से यहां नहीं प्रस्तुत किया जा सकता है लेकिन संक्षेप में यह बिल–हिन्दू विवाह अधिनियम, विशेष विवाह अधिनियम, गोद लेना, अल्पआयु संरक्षता अधिनियम, हिन्दू उत्तराधिकारी अधिनियम, निर्बल तथा साधनहीन परिवार के सदस्यों का भरण पोषण अधिनियम, अप्राप्तवयी सरंक्षण संबंधी अधिनियम, हिन्दू विधवा पुनर्विवाह अधिनियम, संपत्ति का अधिकार अधिनियम, बाल विवाह निषेध अधिनियम, स्त्री शिक्षा अधिनियम, तलाक अधिनियम, अंतर्जातिय विवाह अधिनियम की वैद्यता, बहुविवाह निषेध अधिनियम आदि सभी आधिनियमों का सविस्तार तर्कसंगत और वैज्ञानिक विशलेषण करता है। लेकिन मनु महाराज के वंशजों ने इस बिल को संविधान में पारित नहीं होने दिया, क्योंकि इस बिल के परित हो जाने से मनुवादी व्यवस्था, पितृसत्तात्मक व्यवस्था का अंत होना तय था। पितृसत्तात्मक व्यवस्था और मानसिकता महिलाओं को न केवल

मानवाधिकार से वंचित करती बल्कि उसे संपत्ति के अधिकार से बेदखल कर गुलाम बनाने की कोशिश करती है। यही वजह थी कि गुलामी की प्रथा और प्रकिया का अंत करने वाले विधान 'हिन्दू कोड बिल' को मनुवादी–पितृसत्तात्मक मानसिकताओं ने पारित नहीं होने दिया।

ब्रह्मणवादी मानसिकता और व्यवस्था ने स्त्रियों को हमेशा अपने अधिकार में रखने का प्रयास किया है। इसे बनाए रखने के लिए उन्होंने संस्कृति और धर्म की स्वीकृति प्रदान की है । यह स्वीकृति ने ही उसे मानसिक तौर पर पुरूषसत्तात्मक व्यवस्था में रहने को मजबूर किया है । हलांकि आज स्थिति में बदलाव आया है । जिनके दो पक्षों को देखा जा सकता है । ''स्त्री को मानव श्रेणी में मानकर उनकों पुरूषों की ही भांति सभी अधिकारों से संपन्न करना समाज का एक पक्ष है और स्त्रियों में अश्लीलता, उच्छृंखलता अनैतिक स्वच्छंदता को बढावा देना दूसरा पक्ष है। इस सब के लिए पुरुष प्रधान समाज ही अधिक दोषी है। मातृशक्ति में नैसर्गिक रूप से ममता, स्नेह, वात्सल्य मैत्री, दया, करूणा, रक्षा एवं पोषण का सम्मिश्रण होता है। पुरुष की विलासितापूर्ण कुत्सित रमण करने की उद्दाम आकांक्षा ही स्त्री को पत्नी से वेश्या तक बनाने में सहायक होती है। भोग की वस्तु गोधन गज धन बाजिधन की भांति कन्या धन या स्त्री धन मानकर जन्म से ही उसे पराया धन मानकर पुत्री के साधारण सर्व सामान्य अधिकारों का अपहरण हनन होता रहता है। स्वाभाविक है कि उसकी मानसिकता भी उसी प्रकार की बन जाए। तभी तो आज की बहू कल सास बनने पर वह सब भूल जाती है। जो स्वयं उसके साथ दुव्यवहारपूर्ण दुघटनाएं हुई थीं। कदाचित दैव का नियम और अपनी नियति मान लेने वाली महिलाएं इस मानसिकता से कभी उबर नहीं सकतीं। दुख तो तब होता है जब वे अपने इस अमाननीय दायभाग को भावी संतान को सौंपती है।''[4]

इसका कारण है कि आज संस्कृतिकरण की प्रक्रिया के तहत पुरुषवादी मानसिकता का भी संस्कृतिकरण हो गया है। यह सब अचानक नहीं हुआ है। यह एक लंबी प्रक्रिया में हुई है जिसे धर्म और संस्कृति की स्वीकृति मिली हुई है। ''आज जब स्त्री उत्पीड़न को ढॅके हुए तमाम नैतिक वैधिक सांस्कृतिक रहस्यावरण स्वतः तार तार हो रहे हैं तो नये नये बौद्धिक रहस्यावरण खड़े किये जा रहे हैं और मूल प्रश्न को दृष्टिकोण करने या अमूर्त बनाने के प्रयत्न भी जारी हैं।''[5] सामंतवादी और ब्राह्मणवादी वर्णसत्तावादी व्यवस्था की गठजोड़ से बनी पूंजीवादी व्यवस्था में स्त्री स्वतंत्रता के नाम पर परोसी जा रही उश्च्छृखलता और मानवीय मूल्यों के हनन की प्रक्रिया में मानव मुक्ति के मूल प्रश्न पीछे छुटता जा रहा है। भौतिकता की प्रवृत्तियां बढती जा रही है। भौतिकवादी संपत्ति की चाह ने स्त्रियों को विशेष प्रकार का गुलाम बनाया है ।

संपत्ति संग्रह की प्रक्रिया में भौतिकवादी इच्छा प्रबलता की ओर बढ़ी । कालान्तर में स्त्रियों की इस इच्छा को पुरुषों ने अपनी सत्ता को कायम करने के लिए कमजोर किया और स्त्रियों की इस कमजोरी का सहारा ले कर उसे और कमजोर करने की साजिश की रचना करते रहें। ''स्त्रियों को अपनी सेविका और भोग विलास की सामग्री बना लेने के लिए पुरुषों ने अगणित और सीमातीत कथाएं, मुहावरें और लोकोक्तियां आदि लिख डालें। स्त्रियों के मन की कमजोरी को भांप कर उसे सौन्दर्य का प्रतिमूर्ति बना दिया तथा शास्त्र–वेद आदि सभी में देवी का स्वरूप दे कर उन्हें एक विशेष प्रकार की भूल भूलावे में डाल दिया। स्त्रियों का सौन्दर्य बढाने के लिए कितने प्रकार के आभूषणों और वस्त्रों का आविष्कार कर डाला। उनकी कोमलता और कांति के लिए कितने प्रकार की विलास सामग्री बना डाली। कामोत्तोजना उत्पन्न करने के लिए पुरूषों ने अपनी शक्ति भर उपाय किये। उसे भुलावे में डालने के लिए उन्हें देवी का स्वरूप दिया। दुर्गा, काली, तारा, लक्ष्मी, सरस्वती, ललिता, शीतला, कामाक्षी, मसानी, भैरवी, ज्वाला आदि देवियों के नाम देकर रोमांचकारी कथाएं लिखीं। परन्तु इस सारे प्रयत्न का ध्येय यही था कि नारी नर के भोग विलास की वस्तु उसकी सेविका और संरक्षिका बनी रहें। अपना जीवन और अपनी सारी शक्ति पुरूष पर निछावर कर दें। उसके स्वतंत्र स्वाभाविक विकास में पुरूष सदा बाधक रहा।''[6]

इस प्रकार पुरूषों ने स्त्रियों को चारदिवारी के भीतर बंद करने की कोशिश की। सत्ता संघर्ष में अपनी सत्ता को मजबूत करने के लिए उन्होंने स्त्रियों की इच्छाओं को दबाने का प्रयास किया। उन्हें कठोर यातना की गृह में रखने के लिए ''उनके हाथों और पैरों में कड़े और बेड़ियां डाल दीं गई, कमर में जंजीर, गले में तौंक और नाक में नकेल। इस तरह बन्दी बनकर स्त्री पुरूषों की आज्ञानुवर्तिनीदासी बन गई। पुरूष घरों और गांवों का स्वामी हुआ और स्त्री उसके अधीन हो गई। विभिन्न देशों में भिन्न भिन्न प्रकार से पुरूषों ने स्त्री को बंदी बनाया। चीन देश में पुरूषों ने लड़कियों के पैर में लोहे के जूते पहना दिये, जिससे उनके पैर इतने छोटे हो गये कि बड़ी हो जाने पर स्त्री घर से भाग नहीं सकती थी । आज भी चीनी स्त्रियां इसी रूप में देखी जाती हैं, और नन्हें पैर चीनी स्त्रियों की शोभा समझे जाते हैं।

भारत में पहले कड़े बेड़ी जंजीर और तौंक आदि द्वारा स्त्रियों को वश में किया गया, किन्तु कालान्तर में जब स्त्रियों ने परेशानी जाहिर की, तो पुरूषों ने उन्हें समझाया कि ये तो तुम्हारे आभूषण है। तुम्हारी शोभा हैं, इनसे तुम बड़ी सुन्दर लगती हो।''[7] इसी मानसिकता और आभूषण, शोभा एवं सुन्दरता ने महिलाओं को गुलाम बनाने में कारगर साबित हुआ। आज भी यह बात साबित होती है कि महिलाओं में आभूषण के प्रति विशेष प्रकार का आकर्षण देखने को मिलती है। बाजारवाद का समीकरण इसका ताजा उदाहरण हो सकता । बाजार ने स्त्रियों को दो चीज दी है एक उसकी स्वतंत्रता को बढावा दिया है तो दूसरे उसे मानसिक तौर पर शोषण का शिकार भी बनाया। बाजार का एक–एक समीकरण स्त्रियों को ब्रांड में और ब्रांड के तौर पर इस्तेमाल कर रहा। मॉल और ब्रांड की संस्कृति में, उसके तंत्र में स्त्री मुक्ति की अवधारणा उलझती जा रही है। परिस्थितियां और परिवेश अपने अनुकूल सभी चीजों को ढालती जा रही हैं। शोषणकारी मानसिकता अपना स्वरूप बदलता जा रहा है। जिसकी पहचान भूमंडलीकरण की दुनिया की चकाचौंध वाली रोशनी में मुश्किल होती जा रही है। परिदृश्य जटिल होता जा रहा है। और प्रश्न उलझे उलझे ढंग से सामने आ रहे है तब ऐसी स्थिति में इतिहास को नये परिप्रेक्ष्य में फिर से देखना जरूरी हो जाता है। इसकी जरूरत महसूस की जानी चाहिए। वरन् ''स्त्री प्रश्न के चाहे जितने भी समाधान और चाहे जितनी भी व्याख्याएँ आज प्रस्तुत की जा रही हो, इतिहास की यह सच्चाई निर्विवाद है कि परस्पर विरोधी वर्गों वाली सभी सामाजिक संरचनाओं में समाज और परिवार में स्त्री की स्थिति मातहत की रही है और इसे धर्म की स्वीकृति प्राप्त रही है। यह भी इतिहास का एक तथ्य है कि पूंजीवादी उत्पादन ने ऐसी स्थितियां पैदा कीं कि सामाजिक उत्पादन में स्त्री मजदूरों की और अन्य नौकरीपेशा स्त्रियों की भागीदारी बढती चली गयी, लेकिन उनकी श्रमशक्ति सबसे सस्ती थी और उनकी पहले से कायम घरेलू गुलामी भी बरकरार थी। इस बुनियाद पर यौन भेद और यौन उत्पीड़न तथा यौनिक आधार पर पार्थक्य, निर्वासन और उपनिवेशन के जटिल सांस्कृतिक सामाजिक मूल्यों संस्थाओं का एक समूचा तंत्र निर्मित विकसित हुआ है।''[8]

सामंती व्यवस्था और ब्राह्मणवादी व्यवस्था तथा इन दोनों ही व्यवस्था से बनी पूंजीवादी व्यवस्था में मानव ने अपनी पहचान मानव के रूप में न केवल खोया है बल्कि गुलामी की पहचान के साथ जीने पर मजबूर हुआ है। इसलिए डॉ. अम्बेडकर ने ब्राह्मणवाद के साथ–साथ पूंजीवाद का विरोध किया तो उसका लक्ष्य मानव के सभी प्रकार की गुलामी से मुक्ति था। ''स्त्री समुदाय की मुक्ति की दिशा में पहला कदम सामंतवादी, ब्रह्मणवादी और पूंजीवाद व्यवस्था का खत्मा है। बचपन से ही समर्पण निर्भरता त्यागपूर्ण प्रेम और वफादारी के आदर्शों व नैतिक शिक्षाओं से उनकी सोच को अनुकूलित करके उन्हें दिमागी गुलाम बनाने का पूरा प्रयास किया गया है। अन्य उत्पीड़ित सुमदायों से उनकी स्थिति इस मायने में भी भिन्न कि उनका मालिक उनसे सिर्फ उनकी सेवाएं और संपूर्ण आज्ञाकारिता ही नहीं बल्कि उनकी संवेदनाएं और भावनाएं भी चाहता है। वह उनसे सिर्फ गुलाम होने की नहीं प्रिय गुलाम होने की अपेक्षा रखता है। यह भी पुरूषों का स्वार्थ ही है कि उन्होंने स्त्रियों के सामने विनम्रता पूर्ण समर्पण और व्यक्तिगत इच्छा के हनन यौन आकर्षण के अभिन्न अंग के रूप में रखा ताकि मनोवैज्ञानिक रूप से स्त्रियां इतनी समर्पित हो जायें कि यौनिक स्वेच्छा और स्वतंत्रता के बारे में सोच भी न सकें और उन्हें अपनी पराधीनता में ही सुख अनुभव हो।''[9] इसलिए जरूरी है कि व्यवस्था परिवर्तन के साथ साथ मानसिकता में बदलाव । यह बदलावा तभी संभव है जब समाज में सभी वर्गों को समान शिक्षा दी जाए। मौजूदा व्यवस्था को देखते हुए यह कहना जोखिम भरा काम है कि इस व्यवस्था में सभी को समान शिक्षा मिल पाएगी । कारण स्पष्ट है कि आज का मौजूदा शिक्षा व्यवस्था जिस बैंकिंक पद्धति पर आधारित है वहां सिर्फ पूंजीपतियों के लिए ही शिक्षा उपलब्ध है । दलितों और स्त्रियों के पास संपत्ति नाम की कोई चीज नहीं है । स्त्रियां आर्थिक रूप से सव्वल हुई भी है तो उस पर उसके पुरूष का अधिकार है । यहां लोगों की असहमति हो सकती है लेकिन प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष देखा जाए तो स्थिति यही है। जहां स्त्रियां आज भी आत्मनिर्भर और स्वाधीन चेतना पर खड़ी नहीं है। यह स्थिति तब और स्पष्ट हो जाती है जब विवाह की स्थिति बनती है। विवाह की स्थितियां आते ही स्त्रियां घर के पुरूषों पर निर्भर हो जाती है । वहां वह स्वयं का निर्णय नहीं ले सकती । यहां उनकी इच्छा का कोई सम्मान नहीं होता । कहा जा सकता है कि प्रेम विवाह में ऐसा होता है। यह बात जायज है लेकिन यह कितना फीसदी है? प्रेम विवाह करने वालों की समाज में क्या स्थिति है इसे इस रूप में देखा जा सकता है–

''प्रेम
जीवन है।
मां की गोद से
घर की आंगन में
पला–बढ़ा यह प्रेम।

आज चारदीवारी
को तोड़कर
खेत–खलिहान में
फल फुल रहा है।
वक्त की गर्द में
संघर्षरत है
जीवन की सामाजिकता में
कब होंगे?
मानव का जीवनोत्सव !
कैसे होगा
क्यों होगा?
वह तो लिपटता जा रहा है
वासना की आग में।
'यूज्य एंड थ्रो'
की नीति पर चलने लगा है
जहां कोई
जाति, धर्म और संप्रदाय
आड़े नहीं आता ,
आते हैं तो
मानसिक भूख की शरीर।
प्रेम, आज प्रेम नहीं रहा
वह अपना 'धम्म' भूल चुका है।
कि
हर प्रेमी–प्रेमिका
ढूढते हैं अपनी प्रेमिका–प्रेमी
अपनी जाति, धर्म और संप्रदाय में
ताकी वह सुरक्षित रह सकें।
लेकिन वहां भी
वह असुरक्षित है
क्योंकि
अर्थ की संस्कारित संस्कृति
कटार की तरह लटकती है
उसकी गर्दन पर
जहां
उसके सर और धर को अलग होना तय है।
क्या यही भारतीय संस्कृति है?
जहां प्रेम की सर्वोत्तम सत्ता व संबंध
प्रेमी–प्रेमिका के जीवन की बली चढाई जाती है।
सामाजिक जीवन बनने से पूर्व
आखिर क्यों?
क्या जीवन में प्रेम नहीं
या प्रेम जीवन नहीं?
या और कुछ......।''(प्रवीण कुमार)

इसकी तहकीकात की जाए तो यह बात सामने आती है कि समाजिक व्यवस्था में व्याप्त जातिवाद और सजातीय विवाह की अवधारणा दोनों ही चीज इसमें काम करती है। इसलिए डॉ.अम्बेडकर ने जातिव्यवस्था और सजातीय विवाह दोनों को खत्म करने का प्रयास किया। यही व्यवस्था दलितों और स्त्रियों की दुर्गति का कारण है।

डॉ. अम्बेडकर ने 'नारी और प्रतिक्रांति' नामक लेख में मनुवादी व्यवस्था में नारी की स्थिति का चित्रण करते हुए लिखते हैं कि ''मनु से पूर्व नारी को बहुत सम्मान दिया जाता था, इससे इंकार नहीं किया जा सकता। प्राचीन काल में राजाओं के राज्याभिषेक के समय में जिन स्त्रियों की महत्वपूर्ण भूमिका होती थी, उनमें रानी भी होती थी। राजा दूसरों की भांति रानी को भी वर प्रदान करता था। राज्याभिषेक के पूर्व चयनित राजा केवल रानी की ही वरन् नीची जाति की अपनी अन्य पत्नियों की भी स्तुति करता था। इसी प्रकार वह राज्याभिषेक के बाद अपने प्रमुख शासनाधिकारियों की पत्नियों का भी अभिवादन करता था।''[10]आखिर क्या वजह थी कि स्त्रियों को मनु पूर्व जो अधिकार प्राप्त था, उससे वह वंचित हो गयी? इसके कारण को भी डॉ. अम्बेडकर बताते हैं कि मनु ने जिस सामाजिक व्यवस्था का निर्माण किया । वह पूर्णतः जाति व्यवस्था पर आधारित है। जाति व्यवस्था न केवल एक बैरियर है बल्कि एक महल की ऐसी सीढ़ी है जिसमें जो जिस पायदान होता है वह दूसरे पायदान पर नहीं जा सकता। उसी पायदान बना रह सकता है। यही जाति व्यवस्था के मूल में है। यही कारण है कि भारतीय समाज में जो अमीर है वह और अमीर होता जा रहा है तथा जो गरीब है वह और गरीब होता जा रहा। और जो जिस जाति, समुदाय में हैं वह दूसरे समुदाय, दूसरी जाति में नहीं जा सकता, उसी में बना रह सकता। जिससे समाज में असमानता की खाई बढ़ी है और वह बढ़ती ही जा रही है। इस असमानता को पाटने का सबसे कारगर उपाय है जातिव्यवस्था का खात्मा। यह तभी संभव है जब समाज में अंतर्जातीय विवाह और सहभोज की व्यवस्था मजबूती के साथ लागू हो। यही बाबा सहाब डॉ. अम्बेडकर का असमानता, पितृसत्तात्मक, ब्राह्मणवाद आदि को खत्म करने का, हथियार और दर्शन था। इसके लिए उन्होंने न केवल संविधान में इसका प्रावधान किया बल्कि स्त्री–पुरूष की समानता और स्त्रियों की अस्मिता, अस्तित्व एवं हक को दिलाने के लिए 'हिन्दू कोड बिल' का निर्माण किया और उसे संविधान के समानांतर लाने की कोशिश की। यह दीगर बात रही कि ब्राह्मणवादी मानसिकता और व्यवस्था के विरोध की वजह से 'हिन्दू कोड बिल' अस्तित्व में नहीं आ सका।

भारतीय समाज में स्त्रियों की दायनीय स्थिति के कारणों के इतिहस पर ध्यान दिया जाए तो जो बातें निर्विवाद रूप से सामने आती है । वह है –एक बाल विवाह, दूसरी आजीवन वैधव्य का जीवन जीना और तीसरी सती प्रथा तथा इन तीनों से उपजी समस्याएं । जिसके मूल में स्त्रियों का अशिक्षित होना है। अशिक्षा के कारण वे अपनी समस्याओं को समझ नहीं पाती और गाहे बेगाहे उसका शिकार होती रहती है। इस सबके मूल में भारतीय समाज की जाति व्यवस्था है। सजातीय विवाह प्रथा का सृजन भी जाति प्रथा से ही हुआ है। सजातीय विवाह प्रथा में स्त्री–पुरूष की समान संख्या का होना आवश्यक है । इस समानता की कवायद ने ही सती प्रथा को जन्म दिया है। सती न होने की स्थिति में आजीवन विधवा बना रहने की बाध्यता बना दी गयी। सती और आजीवन विधवा न होने की स्थिति में ''वह स्त्रियां जाति के बाहर विवाह कर सकती है और सजातीय विवाह पद्धति को भंग कर सकती है या वह जाति में ही विवाह कर प्रतियोगी बनकर ऐसी लड़की के विवाह की संभावनाओं में हस्तक्षेप कर सकती है जो उसकी जाति में वास्तविक रूप से वधू बनने की अधिकारिणी है। इसलिए वह प्रत्येक स्थिति में संकट का कारण बनी रहती है।''[11]

जाति व्यवस्था में स्त्री–पुरूष दोनों की समान संख्या को बनाए रखना के चार कारण हैं– 1.दिवंगत पति के साथ उसकी विधवा का अग्निदाह 2.अनिवार्य वैधव्य अग्निदाह का हल्का रूप 3. विधुरपर अनिवार्य ब्रह्मचारी का जीवन आरोपित करना और 4. उसका विवाह ऐसी लड़की से कर देना जो विवाह योग्य न हो अर्थात् बाल विवाह, अनमेल विवाह।''[12] इस प्रकार देखा जाए तो जाति और सजातीय विवाह दोनों एक ही वस्तु है। एक ही सिक्के के दो पहलू है। ''सती प्रथा, अनिवार्य वैधव्य और बालिका विवाह ऐसी प्रथाएं है जिनका उद्देश्य जाति में अतिरिक्त पुरूष और अतिरिक्त स्त्री की समस्या को हल करना और सजातीय विवाह व्यवस्था को बनाए रखना था। इन प्रथाओं के बगैर सजातीय विवाह व्यवस्था को सख्ती से लागू नहीं किया जा सकता और सजातीय विवाह व्यवस्था के बगैर जाति एक धोखा है।''[13] जाति व्यवस्था और सजातीय विवाह प्रथा ने समाज में दहेज जैसी कुप्रथाओं को जन्म दी है। इस कुप्रथा ने समाज में स्त्रियों का जीना मुश्किल कर रखा है। जिसका उदाहरण हम दैनिक समाचार पत्र के पन्नों में छपी घटनाओं के आधार पर देख सकते हैं कि कोई ऐसा दिन न होगा जिस दिन समाचार पत्रों में दहेज प्रथा के कारण या पितृसत्ता के कारण स्त्रियां उत्पीड़ित और प्रताड़ित न होती है। देखा जाए तो दहेज कुछ और नहीं संपत्ति है। और सामंती–ब्राह्मणवादी मानसिकता के द्वारा पूंजी इकट्ठा करने की प्रथा है। आज यह एक प्रकार का स्टेट्स भी बन गया है। इस स्टेट्स ने ऐसा संघर्ष पैदा कर

दिया है कि समाज में दहेज न देने वालों का जीना मुश्किल हो गया है। इस प्रथा ने ऐसा विकराल रूप धारण कर ली है कि बहू द्वारा मायके से दहेज नहीं लाने पर दहेज के रूप में उसे अपनी जिंदगी देनी पड़ती है। नतीजा क्या हुआ समाज में स्त्री–पुरूष का अनुपात असमानता की खाई बढी है। बड़े पैमाने पर कन्या भ्रूण हत्या हुई। वर्ष 1991 की जनगणना के अनुसार प्रति 1000 पुरूष पर 927 स्त्रियां का अनुपात है। कन्या भ्रूण हत्या के कारणों का विश्लेषण करते हुए कहा जा सकता है कि ''क्या कन्या भ्रूण हत्या समाप्त हो जाने से लिंग–अनुपात ठीक हो जाएगा? क्या लिंग–अनुपात ठीक हो जाने से लड़कियों की स्थिति ठीक हो जाएगी? दोनों सवालों का जवाब नहीं में होगा। जब कन्या भ्रूण हत्या की तकनीक नहीं होती थी तो कन्याएं जन्म के बाद मार दी जाती थीं या जहां यह तकनीक इस्तेमाल नहीं की जा रही वहां कन्याएं उपेक्षा से मरने दी जाती रही है। इसी तरह जहां लिंग–अनुपात ठीक भी है वहां भी लड़कियों के विरूद्ध घरेलू हिंसा, दहेज प्रताड़ना, श्रम एवं यौनिक शोषण, नीतियो ंएवं कार्यान्वयन में अवहेलना और वस्तुकरण का अभिशाप ज्यों का त्यों काम करता रहता है।''[14] स्त्रियों की दुर्स्थितियों का जायजा लेते हुए उसके कारणों का जिक्र करना अनुचित नहीं होगा। ''पारिवारिक व्यवस्थाएं–विशेषकर श्रम, संपत्ति एवं यौन से संबंधित। वंश परंपराएं। धार्मिक पद्धतियां। कानूनी प्रक्रियाएं। संपत्ति /रोजगार के पूर्वाग्रह। पुरूष और नारी के अलग–अलग विकास से उत्पन्न अजनबीकरण। स्त्री पर थोपी गई शारीरिक–मानसिक विवशताएं। नीतियों/योजनाओं में प्रत्यक्ष–प्रच्छन्न भेदभाव। भोगवादी संस्कृति और मुनाफाखोर बाजार।''[15] इस सब की जड़ में समाज में व्याप्त ब्राह्मणवादी मानसिकता, व्यवस्थाएं और उससे उपजी व्यवस्था जातिवाद, सजातीय विवाह और बहिष्कार की व्यवस्थाएं मौजूद है। जिनमें से दो की चर्चा की जा चुकी है ।

''किसी भी व्यवस्था से किसी भी व्यक्ति को बहिष्कृत करने की प्रथा को ब्राह्मणवाद ने जन्म दिया । यह पद्धति जाति प्रथा के कारण उत्पन्न हुई। ब्राह्मणवाद ने जातिप्रथा को जन्म देने का जब एक बार निश्चय कर लिया तब बहिष्कृत व्यक्तियों के बारे में ऐसा नियम बनाना आवश्यक ही था । बहिष्कृत व्यक्ति को दंडित कर ही जातिप्रथा लागू की जा सकती थी ।''[16] ब्राह्मणवाद में जाति का उल्लंघन ही दंडनीय है बाकी अन्य का उल्लंघन किया जा सकता है। यही भारतीय समाज का सबसे बडा रोग है कि मानव का शरीर खत्म हो जाता है लेकिन उसमें लगा रोग 'जाति' का नाश नहीं हो पाता। इस रोग का इलाज भी संभव है। भारतीय समाज के सभ्यता और संस्कृति के अंधविश्वासी मानसिकता, धर्म, नीति, रीति–रिवाज की रूढ़ियां और कुव्यवस्था के हिमायती उस रोग से मुक्त नहीं होना चाहते हैं। जब तक समतामूलक समाज का निर्माण नहीं होता, समाज में समता, स्वतंत्रता, बंधुत्व और न्यायपरक व्यवस्था का निर्माण नहीं होता तब तक समाज में व्याप्त विषमता, अन्याय, असमानता आदि का खात्मा संभव नहीं है। विषमता, पितृसत्ता, अन्याय, असमानता आदि को बनाए रखने वाली मानसिकता, प्रवृत्तियों और उसको बनाए रखने वाली जाति व्यवस्था का अंत असंभव नहीं है। जातिवादी मानसिकता और व्यवस्था का अंत अंतर्जातीय विवाह एवं सहभोज में निहित है। जो व्यवस्था अंतर्जातीय विवाह और सहभोज का निषेध करती है वह वास्तव में उस व्यवस्था को बनाए रखना चाहती है। जिसकी चर्चा ऊपर की जा चुकी है। वह मानव मानव में विभाजन को बरकरार रखना चाहती हैं। जाति व्यवस्था और कुछ नहीं मानव मानव के विभाजन की व्यवस्था है। पुरूष–पुरूष, स्त्री–पुरूष असमानता की व्यवस्था है। इसलिए अंतर्जातीय विवाह का निषेध न केवल सामाजिक एकता की निर्मिति को भंग करना है बल्कि मानवीय एकता की राह में सबसे बड़ी बाधा उत्पन्न करना भी है। डॉ.अम्बेडकर के शब्दों में ''अंतर्जातीय विवाह या सहभोज का निषेध करना समाज को तोड़ देने के बराबर है। यह एकता के लिए मौत का पैगाम है, एकजुट होकर काम करने के रास्ते में एक जबरदस्त बाधा है।''[17] ''अनुलोम और प्रतिलोम विवाहों अर्थात् उच्च वर्ण की स्त्री और निम्न वर्ण के पुरूष के बीच विवाह पर रोक लगा दी । यह वर्णों वर्णों के बीच आपसी संबंध का समाप्त करने और इनमें एक–दूसरे के प्रति गैर भावना पैदा करने की दिशा में एक कदम था।''[18] इसीलिए डॉ.अम्बेडकर ने मानव मानव में, स्त्री–पुरूष में विभेद, विभाजन, विषमता आदि फैलाने वाली व्यवस्था के अंत के लिए संविधान में कानूनी प्रावधान किया । मानव के लिए मानवाधिकार एवं कर्त्तव्य की व्यवस्था की तो उसका राज्य द्वारा संरक्षण भी प्रदान किया। इसे व्यावहारिक रूप देने के लिए संवैधानिक प्रवधान के साथ–साथ उसे सामाजिक मान्यता देने के लिए 'हिन्दू कोड बिल' जो कि हिन्दू समाज का सामाजिक विधान है, का भी निर्माण कर रहे थे। 'हिन्दू कोड बिल' स्त्रियों को न केवल मानव का दर्जा देता है बल्कि उनके अधिकारों–कर्त्तव्यों को भी संरक्षित करता है। जिस अस्मिता, अस्तित्व और अधिकार की लड़ाई आज स्त्रियां लड़ रही है उस सब का प्रावधान 'हिन्दू कोड बिल' में है । 'हिन्दू कोड बिल' डॉ. अम्बेडकर के दर्शन की उपज है जो उनके स्त्री चिंतन को उपस्थित करता है। 'हिन्दू कोड बिल' की पहल

नारीवादी चिंतकों और स्वयं नारी के द्वारा की जाती है तो संभव है कि वह महिला सशक्तिकरण का न केवल 'ब्लू प्रिंट' होगा बल्कि उसका मजबूत आधार स्तंभ भी बनेगा।

संदर्भ–

1. स्त्रियों की पराधीनता जॉन स्टुअर्ट मिल जॉन स्टुअर्ट मिल(हिन्दी अनुवाद:प्रगति सक्सेना),इस शृंखला के बारे में,राजकमल प्रकाशन,2002, नई दिल्ली।
2. वही पृ0 17
3. हिन्दू नारी का उत्थान और पतन, बाबा साहेब डॉ. बी.आर.अम्बेडकर (हिन्दी अनुवाद:श्री वर्द्धनजी)पृ08सम्यक प्रकाशन,2003,नई दिल्ली।
4. वही पृ0 11
5. स्त्रियों की पराधीनता वही पृ0–9
6. हिन्दू नारी का उत्थान और पतन पृ064–65
7. वही पृ0 62
8. स्त्रियों की पराधीनता पृ0 10
9. वही 28
10. बाबा साहब डॉ.अम्बेडकर संपूर्ण वाङ्.मय भाग–7 पृ0334डॉ.अम्बेडकर प्रतिष्ठान,कल्याण मंत्रालय,भारत सरकार,1998,नई दिल्ली।
11. वही पृ0183
12. वही पृ0185
13. वही पृ0187
14. लड़कियों का इंकलाब जिंदाबाद,संपादन विकास नारायण राय, साहित्य उपक्रम पृ01
15. वही पृ03
16. बाबा साहब डॉ.अम्बेडकर संपूर्ण वाङ्.मय भाग–7वही पृ0 191
17. वही पृ0191
18. वही पृ0 194

STRUGGLE